IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भक्ति काव्य की महान विदुषी 'मीराबाई'

विवेक वर्धन
शोधार्थी, हिन्दी विभाग,
नव नालन्दा महाविहार (सम विश्वविद्यालय),
संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार,
नालन्दा – ८०३१११ (बिहार)

शोधसार - धरती पर प्रेम का विमर्श करते समय भगवान श्रीकृष्ण का नाम स्वाभाविक रूप से उभरता है, जिसके साथ राधा और मीरा का नाम जुड़ता है। राधा को कृष्ण की प्रेयसी और मीरा को उनकी दीवानी माना जाता है। मीरा का जीवन कृष्ण के प्रति भक्ति और प्रेम की अद्वितीय मिसाल है। उन्होंने कृष्ण को अपने पति मानते हुए भक्ति की पराकाष्ठा को छुआ। उनके पदों में कृष्ण के प्रति प्रेम और विरह की गहरी अनुभूति है, जिसमें माधुर्य भाव की विशेषता दिखती है।

मीरा के रचनाओं में 'वरसी का मायरा', 'गीत गोविन्द टीका' जैसे ग्रंथ शामिल हैं। उनकी भाषा में राजस्थानी, ब्रज, गुजराती और पंजाबी का मिश्रण मिलता है। उनका काव्य न केवल भक्ति का बल्कि एक विद्रोह का भी प्रतीक है, जिसमें उन्होंने समाज की रूढ़िवादिता का सामना किया। मीरा ने भक्ति में लीन होकर समाज की परवाह किए बिना अपने इष्ट को पूजने में कोई संकोच नहीं किया।

उनकी कविताएं सरलता, माधुर्य और भाव-विश्वलता से ओत-प्रोत हैं। मीरा का जीवन और उनकी रचनाएं आज भी समाज में प्रेरणा का स्रोत हैं, जो सच्चे प्रेम और भक्ति की गहराई को दर्शाती हैं।

कूटशब्द - भक्ति काव्य, मीराबाई, प्रेम, कृष्ण, महान बिदुषी।

प्रस्तावना - "लड़कर सारी दुनिया से, जब प्रीत के रंग में रंगती है,

होकर आराध्य में विलीन, तब कोई मीरा बनती है।"[1]

धरती पर जब - जब प्रेम पर विमर्श होता है तो भगवान श्रीकृष्ण का नाम हमारे आँखों के सामने तैरने लगता है और ज्योहीं कृष्ण का नाम दृष्टिगोचर होता है तो वहीं राधा और मीरा का नाम स्वर्णीम अक्षरों में वैश्विक पटल पर सामने आता है। एक तरफ जहां राधा का नाम कृष्ण के प्रेयसी के रूप में आता है तो वहीं दूसरी तरफ मीरा को कृष्ण की दीवानी माना जाता है। मीरा अपने जीवन के प्रारंभिक दौर में ही कन्हैया की प्रतिमा को पति मान लिया था। यह प्रेम और भक्ति की पराकाष्ठा है। उनकी कविताओं में कृष्ण की भक्ति दर्पण की तरह स्वच्छ दिखती है। भक्ति काल के कवियों में मीराबाई का अनन्य स्थान है। इनकी कवितायें कृष्ण के प्रेम और भक्ति में रंग कर और गहरी हो जाती है। मीरा भजन और स्तुति की रचनाएँ कर आमजन को भगवान के और समीप पहुँचाने वाले संतों और महात्माओं में मीराबाई का स्थान सबसे ऊपर माना जाता है।

मीरा बाई की साहित्य में योगदान को देखें तो उन्होंने 'वरसी का मायरा', 'गीत गोविन्द टीका', 'राग गोविन्द' एवं 'राग सोरठा के पद' नामक ग्रन्थों की भी रचना की है। मीरा बाई के भजनों व गीतों का संकलन 'मीरा बाई की पदावली' में किया

[1] मीरा बाई कि कबिता

गया। उन्होंने अपने पदों की रचना के लिए राजस्थानी भाषा और बृज भाषा का उपयोग किया है। हालांकि की उनके भाषाओ पर मतभेद रहा है। उनके पदों की भाषा राजस्थानी और ब्रज तो है ही उसमें गुजराती, पंजाबी, खड़ी बोली एवं पूर्वी तक का थोड़ा-बहुत सम्मिश्रण पाया जाता है।

डॉक्टर मोतीलाल मेनारिया, डा० श्रीकृष्ण लाल गुजराती के विद्वान फबरेचन्द मेघाड़ी, डा० जगदीश गुप्त उनकी भाषा राजस्थानी मानते हैं जबकि डा० मेनारिया तथा डा० श्रीकृष्ण लाल का मत है कि मीरा ने राजस्थानी तथा ब्रजभाषा दोनों में कविता लिखी-कुछ पद ब्रजभाषा में और कुछ राजस्थानी में। फबरेचन्द मेघाणी मीरा की भाषा शुद्ध राजस्थानी बताते हैं जो लोकप्रियता एवं पदों की कण्ठ-परम्परा के कारण परिवर्तित होती गई। डा० जगदीश गुप्त डाकोर की प्रति (रचना काल संवत् १६४२) के आधार पर उनकी भाषा राजस्थानी मानते हैं जिसमें ब्रजभाषा के शब्द मिल गये हैं। कुछ विद्वान् जैसे डा० रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' उनकी काव्य-भाषा ब्रज मानते हैं।

मीरा को हिंदी साहित्य में भक्ति काल विख्यात कवियित्री के रूप में जाना गया है। उनके पंक्तियों के विरह की ताल उनके रचनाओं की शोभा बढ़ा रही है।उनके पदों में श्रृंगार और शान्त रस का विशेष उल्लेख मिलता है। उनके भक्ति में माधुर्य भाव की विशिष्टता दिखती है। कृष्ण को इष्ट देव मानते हुए वे खुद को कृष्ण की दीवानी और रैदास को गुरु मानती हैं। मीरा बाई मंदिरों में जाकर कृष्ण की प्रतिमा के समक्ष कृष्ण भक्तों के साथ भाव भक्ति में लीन होकर नृत्य करती थी। यह उनके इष्ट के प्रति भक्ति का अनूठा दृश्य था।

मीरा का कृष्ण के प्रति प्रेम भावना -

समाज में मकड़े की तरह जकड़ चुके व्यवस्थाओं को अपने पंक्तियों से निडरता की बागडोर थामहे चुनौतियों से लड़ने वाली मीरा कृष्ण को ही प्रेमी के साथ ही पति भी मान ली थी। मीरा ने कृष्ण की भक्ति माधुर्य भाव से की है। इसमें भक्त परमात्मा की उपास्ना पति या प्रियतम के रूप में करता है। तभी तो वे कहती हैं -

"मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई।

जाके सिर है मोर पखा मेरो पति सोई।"[2]

जब कोई प्रेम में होता है तो वह समाज के सारे ताने- बाने को तोड़ कर स्वछंदता की ओर उन्मुक्त होता है। मीरा भी अपने प्रेम में कृष्ण को अपना पति मान कर परिवार के सभी मर्यादाओं को तोड़ कर, बिना किसी को परवाह किए संतो के सभा में ज्ञान प्राप्ति के लिए चली जाती है। उन्होंने अपने आँसुओं के जल से सींच-सींचकर प्रेम के सागर बनाया है। जिसके सहारे आनंद रूपी नाव पर चढ़ कर अपने जीवन को आगे बढ़ाती है। मीरा के मन में हमेशा कौंधते रहता है कि प्रभु के भक्ति में लीन व्यक्ति प्रसन्न प्रतीत होता है तो वहीं मोह- माया से घिरे इंसान पर दुःखों का साया अपना आधिपत्य जमाये रखता है। इसी विचारों को स्वीकृति देती हुई मीरा खुद को गिरिधर की दासी बताती है और अपने जीवन के उद्धार के लिए प्रार्थना करती है। मीरा कृष्ण की भक्ति में इस कद्दर लीन है कि उनके लिए पूरी व्यवस्था के निषेध का क्रांतिकारी दर्शन घटित दिखाई देता है। मीराबाई का काव्य उनके हृदय से निकल सहज प्रमोंच्छवास का सारा रूप है। वे लिखती है -

"बिहारिन बावरी सी भई।

ऊंची चढ़ी अपने भवन में टेरत हाय ढई।।

ले अंचरा मुख अंसुवन पोंछत उघरे मात सही।

मीरा के प्रभु गिरिधर नागर बिछूरत कछु न कहीं।।"[3]

निच्छल प्रेम मीरा के भक्ति में विशेष दिखता है, जो उनके भक्ति की आत्मा है। उन्होंने कृष्ण की भक्ति माधुर्य भाव से की है, जिसमें कोई भी भक्त अपने परमात्मा की उपासना पति या फिर प्रेमी मान के करता है। मीरा युग में श्रृंगार के दोनों रूप

[2] मीरा बाई कि कबिता

[3] मीरा बाई कि कबिता

देखने को मिलता है, लेकिन इसमें संयोग श्रृंगार के पद कम ही दिखते हैं। वास्तव में मीरा भक्ति के उस दौर में हैं जहां उन्हें विरहिणी के रूप में जाना गया है। क्योंकि अक्सर कृष्ण के प्रेम में विलीन मीरा की अंतरात्मा कृष्ण से मिलने के लिए अत्यंत आतुर रहता है, जो उनके अविरल प्रेम को दर्शाता है।

कृष्ण के भक्ति में मीरा संसार से पूर्ण रूप से वैराग्य हो चुकी थी, जिसके लिए उन्हें सामाजिक ताने बाने के दौर से भी गुजरना पड़ा था। जिसका उन्होंने कभी ध्यान नहीं दिया। वे प्रेम के डगर पर बिना रुके बढ़ती रही और बिना समाज के परवाह किए बढ़ती रही। वे सामाजिक चुनौतियों से जूझती रही, फिर भी मीरा जी के उच्च चरित्र, संयम, धैर्य और ज्ञान भक्ति प्रकाश से समाज की जटिल, आधारहीन, भक्ति बाधित, कुंठित मानसिकता के अज्ञान रूपी बादलों को छंटने पर विवश होना पड़ा।

मीरा का पग जहां भी पड़ा कृष्ण भक्ति की वर्षा में वह सफर भीगता गया। मीरा के पदों में श्री कृष्ण के प्रति प्रेम को देखा जा सकता हैं, प्रेम योगिनी मीरा के स्नेहपूर्वक पावन गायन , उनके द्वारा दिए स्मरण, उनके चिंतन आज भी भगवद भक्तों के जीवन को आनंदित करता है। भक्ति के लिए रास्ता तैयार करता है और लोगों के लिए पथ- प्रदर्शक बनता है। परमात्मा के प्रति उनकी भक्ति में इतनी लीन थी की दुनिया की व शारीरिक कष्टों की भी परवाह नहीं की क्योंकि वह अपने प्रियतम के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित थी। मीरा ने अपने इष्ट देवता गिरधर का जो रूप निमित किया है,वह अत्यंत मोहक है। मीरा के रूप चित्रण की यह भी विशेषता है कि वह प्राय: गत्वर होता है। गिरधर नागर को प्राय: सचेष्ट अंकित किया जाता हैं या तो वह मुरली बजाते हैं या मंद मंद मुस्कुराते हैं या मीरा की गली में प्रवेश करते हैं -

"जिन चरन धारायों माधव हरन।

दासि मीरा लाल गिरधर अगम तारण तरना।"

मीरा का जीवन एकांत का जीवन था और उनके एकांतित जीवन ने ही उनके कविताओं को अनन्य स्थान तक पहुंचाया। उनकी कविता चीख पुकार की कविता नही है, बल्कि भक्ति में डूबे हुए हृदय की आकूल गाथा है, जिसमें अपने प्रियतम के सान्निध्य को प्राप्त करने का सुखद बोध है। भक्तिकालीन काव्य में मीरा की कविता का अपना वैशिष्ट्य है। मीरा की कविताओं में भक्त और परमात्मा का मिलन दिखता है। मीरा की कविताओं का सबसे बड़ा गुण है-सहजता, सरलता, माधुर्य एवं प्रवाहपूर्ण होना। इसका कारण था कि उनका सम्पूर्ण काव्य आत्म-निवेदन है, उसमें निजी भावों की, तीव्र अनुभूति की अभिव्यक्ति है। जहां सूर के काव्य में कवि और कृष्ण के बीच गोपियाँ हैं, वहां मीरा और कृष्ण का संबंध सीधा और प्रत्यक्ष है। "जैसे कि हमें पता है कि इष्ट देव तक पहुंचने की सीढ़ी पर चढ़े बिना उच्चतम भक्ति प्राप्त करना मुश्किल है। लेकिन मीरा ने उसे प्राप्त किया था। मीरा का आचरण और चरित्र आदर्श और अतुलनीय था। जिस तरह उनकी भक्ति उत्कृष्ट था उसी तरह उनकी चरित्र की पवित्रता भी उत्तम थी। मीरा केवल भक्त ही न थी वे कवि थी, गायिका थी और सबसे बढ़कर एक शुद्ध, सरल और पवित्र हृदया मानवी थी।"[4]

मीरा का विरह-वेदना -

कृष्ण भक्ति की अनन्य प्रेम भावनाओं में अपने गिरधर के प्रेम में रंग राती मीरा का दर्द भरा स्वर अपनी अलग पहचान रखता है। समस्त भारत उस दर्द दीवानी की माधुर्य भक्ति से ओत-प्रोत रससिक्त वाणी से आप्लावित है। मीरा शाश्वत प्रेम में लीन आत्मदीप निरंतर अपने प्रियतम के प्रति उत्पन्न प्रेम की मधूर पीड़ा में जलती रहती है, इस तरह से विरह की आग में दीपक की भांति जलते रहें, कभी यह अग्नि की ज्वाला बुझे नहीं, ऐसी कवियित्री की मनोकामना है। यही उनकी शास्वत प्रेम की निसानी होगी।

[4] मीराबाई जीवन चरित और आलोचना - डॉ, श्रीकृष्णलाल, पृ. ७९

"तानी उसने आसमान-सी छतरी फिर भी

जीवन भर वह रही भीगती

अपने भीतर की वर्षा में

विष की बेल लगी मुरझाने

मीरा ने इस बार पटककर फोड़ दिया था विष का प्याला!"

मीरा का जीवन काफी कष्टमय बिता था। पति के मृत्य के बाद उनकी स्वतंत्रता पर पाबंदी लगाने ल समाज ने भरपूर कोशिश किया था। असह्य और मर्यादा विहीन मान कर उनके चरित्र पर दाग लगाने का लगातार प्रयास किया गया, उन्होंने जीवन भर नारी की पीड़ा झेली। इन सब कष्टों का प्रभाव उनके रचनाओं में भी देखा गया।

अत्यधिक भक्ति काल के कवियों के दृष्टि में नारी नरक की खान, माया, ठकनी आदि कह कर संबोधित किया गया था।रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है - "ये चित्र या तो नापजोख करने वाले हैं या अपनी अतिशयोक्ति के कारण मज़ाक की हद तक पहुंच गए हैं।" लेकिन महान विदुषी मीरा ने अपने कविताओं से इनके विचारों को खंडित किया। वास्तव में मीरा की भक्ति भावना में प्रेमी से मिलने से ज्यादा उसके साथ की विरह -वेदना का कहीं अधिक दिखती है -

"आवो मनमोहना जी मीठा थांरा बोल।

बालपने की प्रीत रमइया जी, कदे नहिं आयो थारो तोल।

दर्शन बिन मोहि जक न परत है, चित्त मेरो डाँवाडोल।

मीरा कह मैं भई रावरी, कहो तो बजाऊँ ढोल।"

मीरा के पदों में अपूर्व भाव-विश्वलता और आत्म-समर्पण का भाव है। विरह की जैसी तीव्र अनुभूति उनके पदों में प्राप्त, होती है। वैसी अन्यत दुर्लभ है। वस्तुतः प्रेम उन्मादिनी मीरा का एक पद उनके हृदय की इस आकुलता का परिचायक है। विरहीनी मीरा का मन लगातार अपने प्रियतम का मुख देखने के लिए लालायित रहती है। उनके दर्शन के लिए वे इतनी ब्याकुल है कि अपने भवन पर खड़ी होकर निरंतर महल की ओर आने वाले पथ को निहारती रहती है -

"कब की ठाढी पंथ निहाएँ अपने भवन खड़ी।"

मीरा कहती है कि जैसे वर्षा ऋतु के मेघ के अनुपस्थि में भी चातक पक्षी व्याकुलता से ओत- प्रोत हो जाता है, जैसे मछली जल बीन तड़पने लगती है, ठीक उसी प्रकार से मैं भी विरह से लाकुल होकर सुध-बुध खो बैठी हूँ -

"उयओं चातक हान को रहें

महली जिमि पानी हो

मीरा व्याकुल चिरहिनी,

सुध बुध विसरानी हो।।"

मीरा का सम्पूर्ण काव्य आत्म संजक काव्य है। जीवन के उतार चराव, सुख-दुख आदि का मीरा ने मार्मिक वर्णन किया है। उनके काल में उनकी व्याकुलता और वेदना निश्छल अभिव्यक्ति पाती है। कृष्ण के प्रेम में पड़ी हुई मीरा, प्रेम से उत्पन्न पीड़ा का वर्णन करते हुए कहती है –

"दरछ की मारी धन बन डोलू,

बैद गिला नहीं कोय मीरां की प्रभु पीर मिटेगी,

जब बैद संबलिया होय।।"

आगे भी मीरा कहती है कि वे प्रेम दिवानी है और उनका दर्द उनके अलावा कोई और नहीं समझता -

"हे री मैं तो प्रेम दिवानी, मेरा दरद न जाने कोय।

सूली ऊपर सेज हमारी, किस बिध सोना होय।"[5]

मीरा ने अपने काव्य में विरह-वर्णन की पारंपरिक शैली का भी उपयोग किया है परन्तु उनके विरह-वर्णन की विशेषता है स्वयं अपनी करुण दशा, मन के विभिन्न भावों का विरह की पीड़ा की तीव्रता, अकृत्रिम सहज-स्वाभाविक वर्णन जिससे सामान्य भारतीय विरहिणी नारी की पीड़ा साकार हो उठी है। प्रतीक्षा करते समय की बचैनी उनके कविताओं में दिख जाती है -

"पंथ निहारूँ उगर बुहारूँ

ऊबी मारग जोय

मीरा के प्रभु कब रे मिलौगे

तुम मिलिया सुख होय।"

मीरा के भक्ति का मूल्यांकन -

मीरा के कविताओं में उनके निजी जीवन का दर्द और यातनाओं को साफ तौर पर देखा जा सकता है। तत्कालीन सामंती समाज के साथ किए गए विद्रोह भी सम्मिलित है। वषों से पुरूष मानसिकता के ग़ुलामी में जकड़ी हुई स्त्रियों के लिए उनकी कविताएं स्वाधीनता- संघर्ष का भी प्रमाण है। मीरा को अपनी कृष्ण भक्ति और अटूट विश्वास है जिसके सहारे वह सत्ता को ललकारती है। मीरा विकट परिस्थितियों से हार कर रुकने वालो में नहीं थी बल्कि उससे लड़ कर आगे बढ़ने वालों में थी। तभी तो बिना लोकलाज की परवाह किए वे गिरिधर गोपाल की आराधना करती रही। सामाज के बनाये रीति रिवाजों को ताक पर रख कर अपना जीवन स्वच्छंदता से जीती रही।

मीरा ने भक्तिकाल में सामाजिक रूढ़िवादी और पारंपरिक मान्यताओं का खुल कर विरोध किया और स्वतंत्रता का वरण किया। तभी तो अपने पति के मृत्यु उपरांत राजा भोजराज के शव के साथ सती होने से मना कर दी। साथ ही राणा सांगा के विरोध के बावजूद भी सन्तो के पास जाना, मंदिरों में नृत्य करना और रात भर भक्ति में विलीन रहने लगी। उन्होंने समाज में फैले हुए पर्दा प्रथा का भी विरोध किया। मीरा स्वच्छंद मन की स्वच्छंद स्त्री थी जिसने स्वतंत्र रूप से अपना जीवन यापन किया।

मैनेजर पाण्डेय ने लिखा है - 'मीरा को अपने विवेक की रक्षा के लिए जिस अग्नि परीक्षा से गुजरना पड़ा, उससे भक्तिकाल तक किसी दूसरे कवि को नहीं। कबीर, जायसी और सूर के सामने चुनौतियाँ और कठिनाइयाँ भाव जगत की थीं। मीरा के सामने भावजगत से अधिक भौतिक जगत की सीधे पारिवारिक और सामाजिक जीवन की चुनौतियाँ और कठिनाइयाँ थी। एक स्त्री, वह भी मेड़ता के राठौर राजपूत कुल की बेटी और मेवाड़ के महाराणा परिवार की बहू, ऊपर से विधवा। यही था मीरा का अपना लोक। उसके धर्म और उसमें स्त्री की स्थिति का अनुमान किया जा सकता है। लेकिन उसके विरुद्ध की कल्पना भी कठिन है। मीरा ने उसके विरुद्ध खुला विद्रोह किया। उस विद्रोह का साक्षी है उनका जीवन और काव्य।'[6]

---

[5] मीरा वाणी, मीरा, पृ. २६

[6] भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य, पृ. २१

मीरा के कृष्ण भक्ति की विशिष्टता यह भी है कि वे मायावी संसार में सौंदर्य नहीं देखती है बल्कि उनको तो इस संसार से दूर विराजमान केवल प्रभु का सौंदर्य ही दिखता है। उनकी प्रेम संवेदना को चित्रित करते हुए पं.करूणाशंकर शुक्ल लिखते हैं कि "मीरा इस नश्वर जगत में अपनी प्रियतम के इस सौंदर्य के स्थायित्व को समझती है, और उस पर वे अपने को लुटा देती है। उस सौंदर्य के आगे मीरा को इस नश्वर जगत में कुछ दिखाई ही नही देता। मीरा वियोगिनी है, विरहिणी है, किंतु फिर भी वे आनंद में उन्मत बनकर गाती हैं। इसलिए वे उस प्रियतम की विरहिणी है, जो असीम है, अनंत है, अलक्ष्य है और अप्राप्य है। मीरा को अपने इस प्रियतम की विरहिणी होने पर गर्व है।"[7]

निष्कर्ष -

आजकल के भक्ति को हम देखतें है तो आज ऐसे भी संत बन बैठे है जिनका भक्ति से ज्यादा बाज़ार और धन संपदा पर ज्यादा ध्यानाकर्षण है। इसके द्वारा भक्ति का व्यावसायिकरण कर दिया गया है। कुछ बाबा विभिन्न प्रकार के कुकृत्यों में संलग्न रहते हैं तो ऐसे समय में मीराबाई की भक्ति भावना की प्रासंगिकता और भी बढ़ जाती है। आज भारतमें जहां आसाराम बापू, बाबा राम रहीम, बाबा रामपाल, बाबा नित्यानंदस्वामी आदि संत व राधे माँ जैसी तथाकथित साधिका समाज के आंखों में धूल झोंककर धार्मिक चोला पहनकर न केवल करोड़ों रूपये जमा कर रखे हैं बल्कि लोगों की धार्मिक भावना और आस्था का लाभ उठाकर भक्तों के साथ अनाचार में भी लिप्त पाया जा रहा हैतो मीराबाई के संघर्ष व त्याग की प्रासंगिकता और बढ़ जाती है। इस प्रकार निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि मीरा के पदों में उनका विरहिनी रूप अधिक मार्मिक है। अपने सरल और निश्छल प्रेम की अभिव्यक्ति में वे अदितीय हैं। प्रेम हृदय की छटपटाहट को उनके काव्य में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। कृष्ण भक्ति में उन्होंने अपना सर्वस्व उन पर न्यौछावर कर दिया है।

संदर्भ सूची -

1. शुक्ल, रामचंद्र. हिंदी साहित्य का इतिहास. विश्वभारती प्रकाशन, नागपुर; 2005.
2. शहापुरे, सुरेखा. मीराबाई की भक्ति साधना. श्रुति पब्लिकेशन; 2007.
3. रानी, मंजु. मीरा मेरी यात्रा. सुभांजलि प्रकाशन, कानपुर; 2013.
4. शास्त्री, कृष्णचंद. मीरा का रचना संसार. कला मंदिर, दूसरा संस्करण, उदयपुर; 2006.
5. सुकूल, ललिता प्रसाद . मीरा स्मृति ग्रंथ. पृ.191.
6. शुक्ल, करूणाशंकर. हिंदी काव्य की कलामयी तारिकाएँ. पृ.13-14.
7. श्रीकृष्णलाल. मीराबाई जीवन चरित और आलोचना. हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग; 2006, पृ. 79, 99.
8. मीरा बृहत पदावली, हरिनारायण पुरोहित राजस्थान प्राच्यविधा प्रतिष्ठान, जोधपुर, तृतीय संस्करण; 2006.
9. मीरा पदावली, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण; 2011.
10. पाण्डेय, मैनेजर. भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, २०२३. पृ. 41.

[7] हिंदी काव्य की कलामयी तारिकाएँ, प्रो. करूणाशंकर शुक्ल, पृ. १३-१४